बाबा जी की पुस्तक 'ध्यान-सोपान' से उनकी सिखावनियाँ

पॉल हॉकवुड द्वारा अंग्रेज़ी में पढ़कर सुनाया गया

ध्यान का लक्ष्य

जब हम ध्यान के लिए बैठते हैं तो पहला प्रश्न यह उठता है : हम किस पर ध्यान करें? लोग तरह-तरह की वस्तुओं पर ध्यान करते हैं और बहुत-सी अलग-अलग तकनीकों के बारे में बताते हैं। महर्षि पतंजलि, एकाग्रता या धारणा के विषय में बताते हैं जिसमें चित्त या मन को स्थिर तथा एकाग्र करने के लिए किसी वस्तु विशेष पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। चित्त को हृदय, भ्रूमध्य या शरीर के अन्य केन्द्रों पर एकाग्र किया जा सकता है। किसी ऐसे महात्मा पर भी चित्त एकाग्र किया जा सकता है जो राग और आसक्ति से ऊपर उठ चुके हों। जैसे-जैसे चित्त उन महान आत्मा में रमता जाएगा, चित्त उनके गुणों को ग्रहण करता जाएगा। वस्तुतः, महर्षि पतंजलि कहते हैं कि जहाँ भी मन को सन्तुष्टि मिले व्यक्ति वहीं एकाग्र हो सकता है।

फिर भी ध्यान के लिए सर्वोत्तम लक्षित वस्तु है, अन्तर-आत्मा। जब आत्मा ही ध्यान का लक्ष्य है, तो हम किसी अन्य वस्तु को क्यों चुनें? यदि हम आत्मा की अनुभूति करना चाहते हैं तो हमें आत्मा पर ध्यान करना चाहिए। यदि हम परमात्मा को जानना चाहते हैं तो हमें परमात्मा का ही ध्यान करना चाहिए। मन जिसका ध्यान करता है उसके जैसा ही बन जाता है।

सन्त-कवि सुन्दरदास कहते हैं :

> जो मन सदैव नारी के बारे में सोचता रहता है,
> वह नारी का स्वरूप प्राप्त कर लेता है।
> जो मन हमेशा क्रोधित रहता है,
> वह क्रोध की अग्नि में जलता रहता है।
> जो मन माया का ही विचार करता रहता है,
> वह माया के कुएँ में गिर जाता है।
> जो मन सतत ब्रह्म की शरण लेता है,

अन्ततः वह ब्रह्म ही हो जाता है।

इसलिए, हमें ध्यान करने के लिए उस वस्तु को चुनना चाहिए जो हमारा सच्चा स्वरूप है। जब हम आत्मा पर ध्यान करते हैं तो हम आत्मा की अनुभूति ही नहीं करते, अपितु आत्मरूप ही हो जाते हैं।

एक बार एक द्रष्टा ने एक ऋषि से पूछा, "वह ईश्वर कौन है जिस पर मैं ध्यान कर सकता हूँ?" ऋषि ने उत्तर दिया, "ईश्वर तुम्हारे मन का साक्षी है।" वही साक्षी ध्यान का लक्ष्य है। उपनिषदों में कहा गया है, "यह मन में वास करता है पर मन इसे जान नहीं सकता क्योंकि मन इसका शरीर है।" आत्मा मन की साक्षी है और मन का स्रोत भी। 'केनोपनिषद्' में कहा गया है : "ब्रह्म वह है जो मन से विचार करवाता है परन्तु जिसे मन द्वारा समझा नहीं जा सकता।" मन जिसके बारे में विचार कर सकता है, वह परम सत्य नहीं हो सकता क्योंकि वह आत्मा, मन की समस्त गतिविधियों की प्रेरक-शक्ति है। आत्मा मन को मननशील बनाती है, कल्पना को कल्पनाशील बनाती है और अहंकार से सतत "मैं, मैं, मैं" करवाती रहती है। इसी प्रकार, वह ईश्वर ही है जिसकी प्रेरणा से हम ध्यान करते हैं।

'गीता' में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

> हे अर्जुन, सभी इन्द्रियों द्वारा 'उसका' प्रकाश प्रकट होता है फिर भी 'वह' इन्द्रियों से रहित है। सभी इन्द्रियों का आधार होने पर भी 'वह' उनसे दूर रहता है। प्रकृति के विभिन्न गुणों का भोक्ता होने पर भी 'वह' उनसे अनासक्त है।"

कौन है वह सत्ता जो मन में आने-जाने वाले समस्त सकारात्मक और नकारात्मक विचारों को जानती है? ध्यान के समय, जब हमारे समक्ष आन्तरिक समस्याएँ आती हैं तो वही सत्ता उन सबको देखती है। वह सत्ता ज्ञानस्वरूप है। वही हमें हर वस्तु का ज्ञान कराती है। उदाहरण के लिए, ध्यान के समय अन्तर में कुछ उभरता है। पहले हम उसके प्रति जागरूक होते हैं; हमें यह ज्ञान होता है कि वह उभर रहा है। फिर हमें यह ज्ञात होता है कि वह वास्तव में क्या है। हम उसे एक अच्छे या बुरे विचार के रूप में पहचानते हैं। वह आत्मा ही है जो हमें किसी वस्तु के अस्तित्व के बारे में बताती है तथा इसका बोध कराती है कि वह वस्तु क्या है। वह शुद्ध बोध ही आत्मा है, हमारे अच्छे या बुरे विचार नहीं। अन्तर में या बाहर, जो कुछ भी होता है, हम जो कुछ भी करते हैं, आत्मा ही है जो हमें बोध कराती है कि ऐसा हो रहा है। यह 'बोध' हमारे भीतर सतत रहता है। यह शुद्ध अहं विमर्श है, जो निराकार है, निर्गुण है। जिस प्रकार यह अन्दर और बाहर की हर बात को जानता है, उसी प्रकार यह स्वयं को भी जानता है। इस ज्ञाता को जानना ही सच्चा ध्यान है।

स्वामी मुक्तानन्द, ध्यान-सोपान
[चित्शक्ति पब्लिकेशन्स, २०१६], पृ १६-१८

डिज़ाइन प्रारूप-रचना करन भुल्लर

© २०२० एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

सुन्दरदास जी द्वारा रचित भजन 'जो मन नारी कि ओर' को सुनने के लिए अंग्रेज़ी पृष्ठ पर क्लिक करें।

बाबा मुक्तानन्द द्वारा लिखित पुस्तक, 'ध्यान-सोपान' सिद्धयोग बुकस्टोर पर उपलब्ध है।